International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 29-10-2021, Accepted: 10-11-2021, Published: 30-11-2021
Volume 7; Issue 6; 2021; Page No. 36-37

नीतिवादी कसौटी पर जैनेन्द्र के उपन्यास

गणेश कुमार साव
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखण्ड, भारत

सारांश
जैनेन्द्र, अज्ञेय और इलाचंद्र जोशी हिन्दी के मनोवैज्ञानिक रचनाकार हैं। जिसमें जैनेंद्र का स्थान भी विशिष्ट है, क्योंकि इन्होंनें अपने उपन्यासों में पात्रों के मन का अति सूक्ष्म विश्लेषण मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है। साथ ही इन्होने अपने स्त्री पात्रों के माध्यम से भारतीय संस्कृति के नीति व आदर्श रूप प्रस्तुत किया है। इनके उपन्यासों के नारी पात्र परिणाम की चिंता किए बिना सच्चाई को बताने में तनिक भी हिचक नहीं दिखाती और सत्य के साथ जीवन की शुरूआत करना चाहती हैं। नारी पात्रों में त्याग, समर्पण व निश्छल प्रेम के भाव का दर्शन होता है, जो भारतीय संस्कृति के नीति रीति के अनुरूप है। जहाँ जैनेन्द्र के उपन्यासों के स्त्री पात्र एक ओर आधुनिक अधिकार संपन्न नहीं है तो वही दूसरी ओर ये कर्तव्य निर्वाह करते हुए नैतिकता, मर्यादा का पालन करते हुए जिस तरह सामाजिक संरचना में रचे बसे पाखंड को तार–तार किया है वह भविष्य की अधिकारसंपन्न स्त्री के लिए रास्ता बनाती हैं।

मूलशब्द: नीतिवादी, भारतीय संस्कृति के नीति व आदर्श रूप

प्रस्तावना

जैनेन्द्र अपने पथ के अनूठे अन्वेषक थे। उन्होंनें प्रेमचन्द के सामाजिक अथार्थ के मार्ग को नही अपनाया जो अपने समय का राजमार्ग था। लेकिन वे प्रेमचन्द के विलोम नही थे, जैसे कि बहुत से समीक्षक सिद्ध करते रहे हैं। जैनेन्द्र हिन्दी साहित्य के मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकार है। इनकी रचनाएँ वस्तुतः छायावदी और प्रगतिवादी दौर की है। प्रेमचंद के बाद के प्रमुख रचनाकारों में से एक हैं। यह एक बड़ी विडंबना है कि प्रेमचंद के बाद हिन्दी के समस्त रचनाकारों का मूल्यांकन प्रेमचंद के चौखट में रखकर देखा जाता है। इस स्थित में प्रेमचंद की रचनाएँ अपनी अलग पहचान के कारण विशिष्ट तो बन जाती है, किन्तु दूसरे रचनाकार कमतर देखे जाने लगते है। यह आवश्यक नही कि प्रेमचंद की रचना की भाषा उनके रूप, उनके प्रतिमान हर कथाकार अपनाएँ। और अगर ऐसा होता भी है, तो पुनरोक्ति दोष से युक्त रचना भला कौन करना चाहेगा? अपनी सोच और अपने भावों के अनुरूप साहित्य लिखने की स्वच्छंदता हर किसी को है ऐसे में यदि जैनेन्द्र जैसे रचनाकार जो सघन भावों और विशिष्ट बौधिक जटिलताओं से युक्त है, यदि कुछ लिखते भी है, तो संभव है कि आलोचको, पाठकों के मस्तिष्क पाठकों के मस्तिष्क की आँत उन्हें आसानी से नही पचा पाती।

जैनेन्द्र जैसे कथाकार को विवादास्पद रचनाकार कहकर उनके मूल्यांकन की दिशा को बदलने का संभव है षड्यंत्र–सिद्धांत चल रहा हो। मनोविज्ञान को साहित्य में समाहित कर जिस नए रूप को जैनेन्द्र ने प्रस्तुत किया है उसे सहज स्वीकृति मिलनी ही चाहिए। आवश्यकता है साहित्य के स्तर से मनोविज्ञान की और मनोविज्ञान के स्तर से साहित्य को समझने की।

जैनेन्द्र जी ने अपनी रचनाओं में जीवन के विविध समस्याओं को उभारा है उनके विचारों और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण में मौलिकता के दर्शन होते हैं। गाँधीवादी जीवन दर्शन की छाप भी उनकी रचनाओं में सहज हीं देखी जा सकती है। वे प्रत्येक बात, विचार, भाव और स्थिति का सूक्ष्म विश्लेषण करते है। वे स्थिति का मूल्यांकन मानव हित को ध्यान में रखकर करते हैं। इन्होंनें अपने पात्रों की सामान्यगति में सूक्ष्म संकेतों की निहित की खोज करके उन्हें बड़े कौशल से प्रस्तुत करते है। उनके पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ इसी कारण से संयुक्त होकर उभरती है। जैनेन्द्र के उपन्यासों में घटनाओं कि संघटनात्मकता पर बहुत बल दिया गया मिलता है। चरित्रों की प्रतिक्रियात्मक संभावनाओं के निर्देशक सूत्र ही मनोविज्ञान और दर्शन का आश्रय लेकर विकास को प्राप्त होते है।

जैनेन्द्र के उपन्यासों को दृष्टिपथ पर रखकर यह देखना होगा कि जिन मनोविज्ञान का उन्होंनें अपने उपन्यासों में उपयोग किया है वह नीतिवादी कसौटी पर खरा उतरता है या नही। 1929 में 'परख' उपन्यास का प्राकशन होता है। यह समय हिन्दी साहित्य का प्रेमचन्दीय प्रकर्ष है। यथार्थ के सरल–सपाट रास्ते दिखायी पडती है। इन परिस्थितियों के बीच जैनेन्द्र की 'परख' अपनी मानोवैज्ञानिक पक्षधरता के कारण केन्द्र में आ जाती है। चेतन, अवचेतन और अचेतन जैसे विषयों पर तथा इड, ईगो और सुपर ईगो जैसे भावों से वयलित साहित्य न के बराबर लिखे जा रहे थे। वहीं जैनेन्द्र जी 'ईगो' को लेकर उपन्यास की कथा–भूमि रच रहे थे। परख के चारों मुख्य पात्र कट्टो, बिहारी, सत्यधन और गरिमा अपने–अपने ईगो (अहं) से संचालित हो रहे हैं। कट्टो के चरित्र में समर्पण भी है, प्रतिक्रिया भी और आत्मपीड़न का भाव भी। वह सत्यधन से पवित्र प्रेम करती है इसलिए चालीस हजार रूपये उसे वह दे देती हैं। यहाँ त्याग परिलक्षित होता है। वह बिहारी से आत्मिक प्रेम करती है इसलिए वह बिहारी से विवाह कर आत्मपीडन के स्तर पर जाकर आत्माहुति देती है– "हमने प्रतिज्ञा की है, वह कुवाँरे रहेंगे, मैं ऐसी ही रहूँगी। और हम दोनों अपनी बात नहीं सोचेंगे (दूसरों की सोचेंगे)।"[1] यहाँ कट्टो के विचार और व्यवहार मनोवैज्ञानिक दृष्टि से जिस धरातल पर खड़े किये जाते हैं वहाँ से क्या भारतीय नीतिवादी रूप के दर्शन नहीं होते?

'सुनिता' उपन्यास में स्वंय सुनीता, श्रीकांत एवं हरिप्रसन्न तीन मुख्य पात्र हैं। यहाँ पात्रों की त्रिकोणीय स्थितियों का, उनके द्वन्द्वों का तथा अवचेतन भावों का अत्यंत सापेक्षिक चित्रण है। सुनीता अपने पति श्रीकांत के निदेशों पर अनुगमन करती है। साथ ही उसका अपना अहं भी समय–समय पर उसे संचालित करता है। यही कारण है कि पति के क्रांतिकारी मित्र हरिप्रसन्न के प्रति मोहाकर्षित होती है। अंत में चेतन–अवचेतन के प्रभाव से मुक्त होकर अपने पति को सारी सच्चाई बता देती है। उसका

सत्यकथन उनके दाम्पत्य जीवन के संबंधों को और भी प्रगाढ़ कर देता है। यहाँ भी भारतीय नीति–रीति का बीज रूप परिलक्षित होता है।

जैनेन्द्र वास्तव में उन कथाकारों की श्रेणी में ठहरते हैं, जिन्होनें विस्तृत कथा को भी सहज प्रवाह के साथ प्रस्तुत किया है। इनका उपन्यास 'त्यागपत्र' इसी श्रेणी का उपन्यास है। इसमें कथा का प्रवाह इतनी सहज गति से होता है कि आम पाठक वर्ग भी कथा–प्रवाह में गतिमान हो जाता है साथ ही कथा एक अलग मानसिक भावभूमि की तलाश करता है। कथा का सामान्य स्वरूप है कि 'मृणाल' एक अनाथ बालिका है। माता–पिता की मृत्यु के बाद वह अपने बड़े भाई द्वारा पालित है। उसकी भाभी मृणाल को प्रताड़ित करती है। यहाँ तक कि मरपीट भी करती है। मृणाल के भीतर एक ग्रंथि विकसित होती जाती है। वह सच्चा प्यार पाना चाहती है। इस प्यार के लिए वह प्रारंभ में साहस भी जुटाती है और अपनी सहेली शीला के भाई से प्यार करती है, परंतु वहाँ वह छली जाती है। भाई से अपेक्षित प्यार नहीं मिलता है। अंत में उसका विवाह एक अधेड़ व्यक्ति से कर दिया जाता है। पति को पाकर वह सच्चा प्रेम पाने के लिए लालायित हो उठती है। इसी क्रम में वह विवाहपूर्व प्रेम की चर्चा अपने पति से करती है। पति उसकी बातों से तिलमिला उठता है और अपनी कुलीनता पर धब्बा मानकर उसे त्याग देता है। मायके वाले भी उसे नहीं अपनाते हैं। अन्ततः वह अत्यंत मलीन बस्ती में एक कोयलेवाले के साथ मात्र जीवन की चाह में जीवित रहती है। मृणाल का भतीजा जज बनने के बाद उसे उस मलीन बस्ती से निकालना चाहता है किन्तु अपनी नियतिजन्य परिस्थितियों से वह मुक्त होना नहीं चाहती है और अन्ततः अत्यन्त दुखद मृत्यु को गले लगाती है।

सम्पूर्ण कथा में भले ही मनोविज्ञान का अत्यंत गुंफित स्वरूप दिखाई पड़ता हो परन्तु यहाँ भारतीय जीवन की सामान्य स्थितियों का स्वरूप निर्धारण भी है। नैतिकता की पराकाष्ठा मृणाल के चरित्र को खुबसुरत बनाती है। सच्ची पतिव्रता नारी का उसका स्वरूप प्रकट होता है–"पति मुझे नहीं देखना चाहते यह जानकर मैंने उनके आँखो के आगे से हट जाना स्वीकार कर लिया।"[2]

मृणाल सामाजिक मर्यादा की रक्षा अपनी प्राणों की बाजी लगाकर करती है। वह चाहती तो पारिवारिक और सामाजिक मर्यादा की धज्जियाँ उड़ा सकती थी पर उसने ऐसा न कर संस्कारगत नैतिकता की रक्षा की और यहाँ लेखक अपनी नीतिवादी दृष्टि को स्थापित करने में सफल होते हैं।

नारी को केन्द्र में रखकर जैनेन्द्र ने अपने उपन्यासों की रचना की है। 'कल्याणी' नामक उपन्यास ऐसा ही एक उपन्यास है जिसमें उन्होनें कामकाजी स्त्री को केन्द्र में रखकर रचना की है। कल्याणी चिकित्सक है। समाज में उसकी अपनी प्रतिष्ठा है। एक अलग पहचान है। वह सभी तरह की जिम्मेदारियों का निर्वाह करती है। अपने पति के प्रति वह उतनी ही कादार है। फिर भी उसका पति सारेआन उसे बेईज्जत करता है। घर पर मारपीट भी करता है। कल्याणी का पति हीन ग्रंथि से भरा हुआ है। कल्याणी की मान–मर्यादा से उसे चिढ़ है। वह हर हाल में कल्याणी को गलत ठहराता है, फिर भी नायिका अपना पातिव्रत्य बनाये रखती है।

मनोविज्ञान की दृष्टि से संभव है कल्याणी अपने इड और ईगो में सामंजस्य नहीं बना पा रही हो उसका चेतन–अवचेतन क्रमिक रूप में उपस्थित न होता हो पर उसके भीतर का नारी सुलभ स्वभाव अवश्य उभरता है। आत्मपीड़न का बोध उसे शांत करता है और आर्दश भारतीय नारी रूप के दर्शन होते है। 'सुखदा' उपन्यास में सुखदा का यह कहना "बच्चे हैं, स्वामी हैं पर वे सब दूर हैं उनकी याद करते डर होता है। किस मुँह से याद करूँ? उन्हें अपने ही हाथों मैंने काटकर दूर किया है, अपने ही हाथों मैंनें अपना अभाग्य बनाया है।"[3] वास्तव में नारी के भीतर की वह भावना मुखरित होती है, जिसमें वह होनी–अनहोनी को अपने ऊपर धारण कर लेती है। इस प्रकार जैनेन्द्र का प्रत्येक चित्रण नीतिवादी कसौटी पर परखा जा सकता है।

संदर्भ सूची

1. कुमार, जैनेन्द्र, परख, पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, सं0 – 09, प्रकाशन वर्ष 1961 पृ0 103
2. कुमार, जैनेन्द्र, त्यागपत्र, पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, सं0–2001, पृ0 62
3. कुमार, जैनेन्द्र, सुखदा, पूर्वादय प्रकाशन, नई दिल्ली, सं0 – 2005, पृ0 03